THE ECONOMIC TIMES

Date: 17-12-25

Get a Fix on Rural Employment Scheme

ET Editorials

On Tuesday, Gol introduced Viksit Bharat Guarantee for Rozgar and Ajeevika Mission (Gramin) Bill 2025 in Lok Sabha, seeking to replace the 20-yr-old MGNREGA. While the rural economy has, indeed, evolved since 2005, the nature of the proposed overhaul suggests the issue's more than just about updating an ageing law. Although the Bill proposes to raise maximum guaranteed workdays from 100 to 125, this increase will be contingent on central allocations and approvals unlike MGNREGA'S demand-driven entitlement. Village-level plans will be drafted by gram panchayats. But these will also require central nod. In effect, the Bill restructures the programme as a centrally-sponsored scheme (CSS) with 60:40 Centre-state cost-sharing arrangement, but without MGNREGA's demand-driven character.

MGNREGA has long been dismissed by critics as a 'ditch-digging' programme, failing to create durable assets, and flagged as a fiscal burden due to its 100% central funding. For FY26, Gol released ₹68,394 cr to states and UTs, against a budgeted *86,000 cr. Pending liabilities exceed ₹10,127 cr till November. Under the new framework, part of the financial burden shifts to states, making implementation dependent on their fiscal capacity.

Persistence of a rural employment programme points to the shortfall in job creation. Despite being dogged by corruption -failures of systems, rather than beneficiaries-the scheme has created assets, and measures such as geotagging of works have improved transparency. Like many CSSS, its flaws are evident. Fixing them is Gol and states' responsibility, not justification for pushing costs of a leaky system onto the economically weakest amid fragile employment and fragmented politics that can have a bearing on allocation.

THE HINDU

Date: 17-12-25

Blatant foul

US's militarised approach to Venezuela is a violation of international law

Editorials

In line with a series of hostile moves, the U.S. seized a Venezuelan oil tanker, Skipper, on December 10. Venezuela called it the latest example of Washington's "piracy, kidnapping, theft of private property, extrajudicial executions in international waters". The tanker was part of Venezuela's ongoing efforts to support Cuba through subsidised oil shipments, with proceeds from resale to China providing Havana crucial revenue. For decades, Venezuela has sent oil to Cuba at highly subsidised prices, with Cuba sending doctors and security professionals to Venezuela. The seizure represents a troubling escalation in U.S. policy toward Venezuela under President Nicolás Maduro. It is also clear that the U.S. Secre tary of State, Marco Rubio, a major hawk on U.S. foreign policy towards Cuba, has sought to disrupt one of the island nation's economic lifelines. The overt moves to engineer regime change in Venezuela and other brazen acts mark a new low in U.S. foreign policy, recalling the interventionist era of its Monroe Doctrine in Latin America.

Before the seizure of Skipper, the U.S. had also conducted strikes in Caribbean waters on boats that Washington alleged were used by drug traf fickers. These attacks appear to constitute acts of war carried out without clear legislative authorisation. The Trump administration insists that the operations are part of its "war on drugs", but has not presented credible evidence to link Mr. Maduro to cartels or to drug trafficking networks. To be clear, Mr. Maduro is credibly accused of manipulating the results in the 2024 presidential elections and his government also bears substantial responsibility for Venezuela's crippling economic collapse. But, acknowledging its failures does nothing to justify the Trump administration's hostile approach. Be it the disproportionate economic sanctions that hurt Venezuela's ability to sell its crude oil, covert actions to take down the Maduro presidency, the ill-conceived recognition of an opposition politician, Juan Guaidó, as President, or the extrajudicial killings in the Caribbean and the seizure of the oil tanker, these actions are tantamount to flouting the rules of the international order that the U.S. purports to uphold. The parallel with U.S. policy towards Cuba since the Cuban Revolution in the 1950s is instructive. The U.S. has maintained an embargo on trade to force regime change in the island nation. The world must condemn these moves, even while maintaining the critique of the Venezuelan regime. A principled defence of international law that applies equally to all actors, including the rich and the powerful, is an imperative so that the world does not descend further into anarchy.

दैनिक भास्कर

Date: 17-12-25

मनरेगा में बदलाव की आखिर क्या वजहें रही?

संपादकीय

वर्ष 2005 में शुरू हुए मनरेगा (नरेगा) का नाम भी बदलेगा और प्रारूप भी। सरकार मानती है कि बदलाव जरूरी हो गया है। नए कानून के बाद कार्यदिवस 100 की जगह अब 125 होंगे, लेकिन कृषि कार्य के लिए श्रमिकों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए दो माह की अवधि तक इस योजना में काम नहीं होगा। कानून के मसौदे के अलावा एक एफएक्यू जारी करते हुए योजना की वे कमियां भी बताई गई, जिनके कारण बदलाव जरूरी हो गया। इसकी बिंदु संख्या 6 के अनुसार गरीबी 12 वर्षों में घटकर 25.7% से 4.86% रह गई है। प. बंगाल का नाम लेते हुए बिंदु 10 कहता है कि इसके 19 जिलों में बिना काम पेमेंट और फंड के गलत इस्तेमाल की घटनाएं मिलीं, जबकि वर्ष 2025-26 की मॉनिटरिंग में 23 राज्यों में काम बिलकुल न होने या खर्च से कम होने की घटनाएं पाई गईं और कुल 193 करोड़ रु. का घोटाला (मिसएप्रोप्रिएशन) पाया गया। लेकिन बिंदु संख्या 9 में यह भी बताया गया है कि मनरेगा में समय-समय पर बदलाव से महिलाओं की भागीदारी सवा गुना बढ़ी और करीब 12 करोड़ श्रमिक इस योजना से जुड़े। केंद्र का दावा अगर सच भी मानें तो औसतन एक लाख करोड़ रुपए के व्यय में 1.93% की गड़बड़ी कोई बड़ा कारण नहीं है। दूसरे, कोरोना के बाद माना गया कि इस स्कीम ने पलायन के शिकार में गरीबों को भयंकर भुखमरी से बचाया। वर्ल्ड बैंक ने भी द स्टेट ऑफ सोशल सेफ्टी नेट शीर्षक रिपोर्ट में इस योजना को बेहतरीन बताया। फिर आज यह गलत कैसे हो गई?

Date: 17-12-25

चुनावों में धनबल व बाहुबल पर अंकुश लगाना अब जरूरी

संजय कुमार, (प्रोफ़ेसर और चुनाव विश्लेषक)

भारतीय चुनाव व्यवस्था में सुधार लाने के लिए कई समितियां गठित की गई हैं। इनके तहत समय-समय पर ऐसे बदलाव किए गए हैं, जिनसे मतदाता की दृष्टि से चुनाव अधिक सहभागी बने हैं, चुनाव आयोग के लिए स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराना आसान हुआ है और उम्मीदवारों की जवाबदेही भी बढ़ी है।

लेकिन दो ऐसे मुद्दे हैं, जिन पर अब भी गंभीर ध्यान देने की जरूरत है- पहला, चुनावों को कम खर्चीला कैसे बनाया जाए और दूसरा, आपराधिक या दागी पृष्ठभूमि वाले उम्मीदवारों को चुनाव लड़ने से

कैसे रोका जाए। हाल ही में संसद में हुआ कई घंटों का लंबा विमर्श भी इसी चिंता को फिर से केंद्र में लाने की कोशिश था। इस चर्चा के दौरान चुनावी प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी और जवाबदेह बनाने से जुड़े अनेक विषय तो उठे, लेकिन चुनावों में धनबल और बाहुबल पर अंकुश लगाने पर कोई ठोस बहस नहीं हो सकी।

भारत में चुनाव सुधारों की यात्रा की शुरुआत 1974-75 में हुई, जब मतदान की आयु, मतदाता सूचियों की शुद्धता तथा चुनावों में धन और बाहुबल पर अंकुश जैसे मुद्दों की समीक्षा के लिए न्यायमूर्ति तारकुंडे समिति का गठन किया गया। 1990 में गठित दिनेश गोस्वामी समिति ने चुनाव आयोग की शक्तियों, दलबदल विरोधी कानून, उपचुनावों सहित कई अन्य मुद्दों पर विचार किया। 1993 में बनी वोहरा समिति का उद्देश्य राजनीति और अपराध के गठजोड़ की जांच करना था। 1998 में गठित इंद्रजीत गुप्ता समिति ने चुनावी खर्च से जुड़े प्रश्नों पर ध्यान केंद्रित किया।

इसके अलावा, विधि आयोग की कई रिपोर्टों (1999, 2014 और 2015) में भी भारत में चुनाव सुधारों से संबंधित मुद्दों को रेखांकित किया गया। चुनाव आयोग ने भी 2004 में सरकार को एक रिपोर्ट सौंपकर चुनाव संचालन की प्रक्रिया में आवश्यक सुधारों का सुझाव दिया था। 2010 की तनखा समिति की रिपोर्ट ने भी चुनाव कानूनों में सुधार की आवश्यकता पर जोर दिया। इसी क्रम में सबसे हालिया पहल 2023 में केंद्र सरकार द्वारा गठित उच्चस्तरीय समिति है, जिसकी अध्यक्षता भारत के पूर्व राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद कर रहे हैं। इस समिति को 'एक राष्ट्र, एक चुनाव' की व्यावहारिकता की जांच का दायित्व सौंपा गया।

चुनाव प्रक्रिया में सुधार के लिए किए गए लंबे प्रयासों की इस यात्रा में कई महत्वपूर्ण पड़ाव भी हासिल हुए हैं। बैलेट पेपर की जगह ईवीएम का इस्तेमाल, बाद में उनमें वीवीपैट को जोड़ा जाना, चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के लिए अपनी संपत्ति और आपराधिक पृष्ठभूमि का खुलासा करने वाला हलफनामा दाखिल करना अनिवार्य करना, चुनाव प्रचार की अवधि को तीन सप्ताह से घटाकर दो सप्ताह करना, मतदान प्रक्रिया की वीडियो रिकॉर्डिंग, सेवाओं में कार्यरत लोगों, 80 वर्ष से अधिक आयु के वरिष्ठ नागरिकों और दिव्यांगों के लिए होम वोटिंग की व्यवस्था शुरू करना आदि। इसके बावजूद सुधार की गुंजाइशें बनी हुई हैं।

संसद में जिन मुद्दों को उठाया गया, वे चुनाव सुधारों से अधिक कानूनी सुधारों की श्रेणी में आते हैं। लेकिन सबसे तात्कालिक जरूरत इस बात पर गंभीरता से विचार करने की है कि चुनावों में धन की भूमिका को कैसे कम या नियंत्रित किया जा सकता है। भारत में चुनाव अत्यंत महंगे हो चुके हैं। इस पर हर कोई चिंता जताता है, लेकिन इससे निपटने के लिए कोई ठोस और गंभीर प्रयास होते नहीं दिखे हैं। इसी तरह, भारत जैसे देश में, जहां दल आधारित मतदान का वर्चस्व है और बड़ी संख्या में मतदाता उम्मीदवार के बजाय पार्टी को वोट देते हैं, दागी पृष्ठभूमि वाले लोगों को चुनाव लड़ने से रोकने का समाधान कानूनी उपायों से अधिक राजनीतिक दलों के स्तर पर संभव है। यदि पार्टियां ऐसे लोगों को टिकट ही न दें, तो समस्या काफी हद तक सुलझ सकती है।

Date: 17-12-25

पश्चिम एशिया से हमारे संबंधों का एक नया दौर शुरू हो रहा है

शहजाद पूनावाला, (भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय प्रवक्ता)

डॉ. विजेता रत्तानी, (सहलेखिका)

भारत अब पश्चिम एशिया में अपनी मजबूत और लगातार मौजूदगी स्थापित कर रहा है, जिसका ताजा प्रमाण प्रधानमंत्री मोदी की ओमान और जॉर्डन यात्रा है। 2018 में उनकी जॉर्डन और ओमान की यात्राएं भारत की पश्चिम एशिया नीति में एक बड़ा मोड़ थीं। इन्हीं से इस क्षेत्र के साथ गहरे और लगातार जुड़ाव की बढ़त मिली, जिसने भारत की विदेश नीति को नया आकार दिया। हालांकि भारत की पश्चिम एशिया पहुंच को कूटनीतिक सफलता के रूप में सराहा जाता है, लेकिन असली परीक्षा हमेशा गति को बनाए रखने, राज्य यात्राओं को स्थायी लाभों में बदलने, प्रवासी समुदाय का भरोसा जीतने और विश्वसनीयता निर्माण की रही है।

कई दशकों तक भारत के पश्चिम एशिया से संबंध मुख्य रूप से तेल आयात और प्रवासी भारतीयों की कमाई तक सीमित थे। इजराइल के साथ संबंध घरेलू राजनीति और फिलिस्तीन मुद्दे के कारण सावधानी से चलते थे, जबकि खाड़ी देशों से रिश्ते अधिकतर तेल आयात पर आधारित थे। प्रधानमंत्री स्तर की यात्राएं बहुत कम होती थीं। प्रधानमंत्री मोदी की लिंक वेस्ट नीति ने इस ढर्रे को तोड़ा और पश्चिम एशिया को भारत की रणनीतिक प्राथमिकता के केंद्र में ला दिया। ऐतिहासिक यात्राएं हुई- 40 साल बाद सऊदी अरब, 34 साल बाद यूएई और 15 साल बाद ईरान । 2023 में भारत द्वारा आयोजित जी-20 शिखर सम्मेलन में यूएई, मिस्र और ओमान को आमंत्रित करना भी इस बात का संकेत था कि भारत वैश्विक दक्षिण की आवाज बनने की कोशिश कर रहा है।

पश्चिम एशिया संघर्षों और तनावों से घिरा हुआ है। इसके बीच प्रधानमंत्री मोदी ने भारत को एक स्थिरता लाने वाली शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है। भारत ने किसी भी सहयोगी को अलग-थलग किए बिना क्षेत्र की सभी प्रमुख शक्तियों के साथ साझेदारी बनाई है। 2018 में रामल्ला दौरे ने फिलिस्तीनी आकांक्षाओं के प्रति समर्थन दिखाया, वहीं इजराइल के साथ संतुलित संबंध बनाए रखना इसका उदाहरण है। आतंकवाद खत्म करने की अपील और साथ ही गाजा शांति योजना का समर्थन- दोनों ने भारत की भू-राजनीतिक संतुलन क्षमता को मजबूत किया है।

वित्त वर्ष 2024-25 में भारत- जीसीसी व्यापार 178.56 अरब डॉलर तक पहुंच गया। भारत को मिलने वाले शीर्ष 10 प्रवासी धन भेजने वाले देशों में से पांच पश्चिम एशिया से हैं। यूएई के साथ सीईपीए और निवेश संधि बड़े व्यापारिक लक्ष्यों को दर्शाते हैं। यूएई अब भारत का चौथा सबसे बड़ा निवेशक है। यूएई, इजराइल, सऊदी अरब, मिस्र, कतर आदि देशों ने ऊर्जा क्षेत्र से आगे बढ़कर विविध क्षेत्रों में निवेश की प्रतिबद्धता जताई है। भारत का

यूपीआई अब ओमान, बहरीन, यूएई और सऊदी अरब में स्वीकार किया जा रहा है। ऊर्जा सुरक्षा को जलवायु कूटनीति से जोड़ते हुए भारत ने सऊदी अरब, ओमान और यूएई के साथ ग्रीन हाइड्रोजन और सौर ऊर्जा साझेदारियां की हैं। आई2यू2 समूह (भारत, इजराइल, यूएई, अमेरिका) खाद्य सुरक्षा, जल तकनीक और नवीकरणीय ऊर्जा पर काम कर रहा है। कनेक्टिविटी बड़ा साधन बनकर उभरी है, जैसे इंडिया- मिडिल ईस्ट-यूरोप कॉरिडोर और ईरान के चाबहार बंदरगाह का विकास।

अबू धाबी में मंदिर, बहरीन - इजराइल के साथ एमओयू और तेल अवीव व खाड़ी देशों में योग दिवस में भागीदारी- ये सभी भारत की सांस्कृतिक पहुंच को दशति हैं। भारतीय भोजन, सिनेमा, परंपराएं सॉफ्ट पावर के साधन बन चुके हैं। मोदी 1.0 ने 'लिंक वेस्ट' की शुरुआत की, मोदी 2.0 ने 'एक्ट वेस्ट' के जरिए इसे दिशा और गति दी और मोदी 3.0 इस पूरी प्रक्रिया को स्थायी रूप से मजबूत कर रहा है।

दैनिक जागरण

Date: 17-12-25

मनरेगा में बदलाव

संपादकीय

केंद्र सरकार ने महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम यानी मनरेगा का नाम बदलते हुए जिस तरह उसके कई प्रविधान भी बदले और इससे संबंधित संशोधन विधेयक लोकसभा में पेश किया, उस पर विपक्ष की आपत्ति पर आश्चर्य नहीं, क्योंकि अब सरकार की हर पहल का विरोध होता है। चूंकि मनरेगा का नया नाम विकसित भारत गारंटी फार रोजगार एंड अजीविका मिशन ग्रामीण अधांत बोबो - जी राम जी कर दिया गया है, इसलिए विपक्ष अधिक हमलावर है। उसे यह कहने का अवसर मिल गया है कि सरकार महात्मा गांधी की उपेक्षा कर रही है। सरकार विपक्ष को यह अवसर उपलब्ध कराने से बच सकती थी, लेकिन शायद उसने ऐसा इसलिए किया ताकि इस अधिनियम में जो आमूल- चूल बदलाव प्रस्तावित हैं, उनका वह अधिक विरोध न कर सके। हालांकि सरकार ने नाम बदलने के औचित्य को सही ठहराया है, लेकिन इसमें संदेह है कि विपक्ष इससे संतुष्ट होगा। वैसे इसकी अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि पहली बार किसी योजना का नाम अथवा उसके प्रावधान नहीं बदले गए। मनरेगा भी मूल रूप में नरेगा थी। उसमें महात्मा गांधी का नाम बाद में जोड़कर मनरेगा किया गया था।

मनरेगा को जिस समय लागू किया गया, उस समय परिस्थितियां भिन्न थीं। सामाजिक सुरक्षा की सबसे प्रभावी योजना के रूप में प्रचलित इस अधिनियम में बदलाव की आवश्यकता एक लंबे समय से महसूस की जा रही थी। विपक्ष के नेता समय-समय पर बदलाव की इस आवश्यकता को रेखांकित भी करते थे, लेकिन अब वे किसी तरह के बदलाव के पक्ष में नहीं दिख रहे हैं। वह समझा जाना चाहिए कि मनरेगा से वे उद्देश्य पूरे होने में कठिनाई हो रही थी, जिनके लिए उसे लाया गया था। ऐसे मामले सामने आ रहे थे, जो यह बता रहे थे कि इस योजना में कई तरह की खामियां घर कर गई हैं। बतौर उदाहरण, जहां मजदूरी आधारित कार्य होने चाहिए थे, वहां मशीनों का इस्तेमाल होता था। इसी तरह ग्रामीण विकास के ठोस काम नहीं होते थे। अब सरकार ऐसी व्यवस्था करने जा रही है, जिससे गांवों में बुनियादी ढांचे का निर्माण हो सके। बदले हुए अधिनियम से ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका और आय के अवसरों को बढ़ावा देने पर विशेष ध्यान दिया जा सकेगा। यह भी उल्लेखनीय है कि मजदूरी के दिवस बढ़ाने के साथ राज्यों को वर्ष में 60 दिन काम रोकने का अधिकार दिया गया है। इसकी मांग भी होती थी। सरकार इस अधिनियम में बदलाव के जरिये ग्रामीण विकास को एक ऐसी दिशा देना चाहती है, जिससे विकसित भारत के लक्ष्य को आसानी से हासिल किया जा सके। उचित यह होगा कि संसद में इस विधेयक के गुण-दोष के आधार पर व्यापक बहस हो ताकि इस अधिनियम को कहीं प्रभावी रूप दिया जा सके। सुधार की पहल के अतिरंजित विरोध से बचा जाना चाहिए।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 17-12-25

ग्रामीण रोजगार योजना में बदलाव

संपादकीय

केंद्र सरकार ने मंगलवार को विकसित भारत-गारंटी फॉर रोजगार ऐंड आजीविका मिशन (ग्रामीण) या वीबी-जी राम जी, विधेयक संसद में पेश किया। यह महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम यानी मनरेगा के तहत चल रहे ग्रामीण रोजगार गारंटी कार्यक्रम में ही संशोधन है। कहा जा रहा है कि दो दशक पहले मनरेगा के आने के बाद से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में काफी बदलाव आया है और नया कानून ग्रामीण भारत की बदलती हकीकत और जरूरत को ध्यान में रखता है। यह रोजगार मुहैया कराने के तरीकों में अहम बदलाव का प्रस्ताव रखता है जिनमें से कुछ पर कई राज्य सरकारें आपत्ति भी जता रही हैं।

विधेयक में प्रत्येक परिवार के लिए रोजगार गारंटी के दिनों की तादाद बढ़ाकर 125 करने का प्रस्ताव है। इससे ग्रामीण भारत के काम तलाशने वाले लोगों को लाभ होना चाहिए। हालांकि ध्यान देने योग्य बात यह है कि बीते

दो दशकों में मनरेगा के माध्यम से सालाना औसतन 50 दिनों का ही रोजगार मिला है जबकि इसके अंतर्गत 100 दिनों के रोजगार का प्रावधान है। इसलिए दिनों की संख्या बढ़ाना तभी मददगार हो सकता है जब रोजगार के पर्याप्त अवसर बनें और उपलब्ध कराए जाएं। रिपोर्ट यह भी बताती हैं कि मनरेगा के तहत काम तलाशने वाले श्रमिकों को हमेशा रोजगार नहीं मिला। इस बारे में यह उल्लेखनीय है कि नई योजना मनरेगा की तरह मांग आधारित नहीं होगी। इसमें भारत सरकार की अधिकांश योजनाओं की तरह मानक फंडिंग होगी। इससे बेहतर योजना बनाने और पूर्वानुमान में मदद मिलेगी। यह एक केंद्र प्रायोजित योजना होगी और अन्य केंद्रीय योजनाओं की तरह वित्तीय बोझ राज्यों के द्वारा साझा किया जाएगा।

मनरेगा के तहत राज्यों ने सामग्री की लागत का 25 फीसदी और प्रशासनिक लागत का 50 फीसदी बहन किया। अब, अधिकांश राज्यों द्वारा कुल लागत का 40 फीसदी साझा करना उनके वित्तीय व्यय को बढ़ा सकता है। यह तर्क दिया जा सकता है कि इससे योजना की निगरानी और क्रियान्वयन में सुधार होगा क्योंकि अब राज्यों की हिस्सेदारी अधिक होगी। लेकिन संभव है। कि कुछ राज्य अतिरिक्त व्यय करने की स्थिति में न हों या ऐसा करने के इच्छुक न हों। वास्तव में, यह सामान्य रूप से केंद्र प्रायोजित योजनाओं पर बड़े प्रश्न उठाता है। जैसा कि भारतीय रिजर्व बैंक की राज्य वित्त रिपोर्ट (2024) ने सही रूप से उल्लेख किया है, बहुत अधिक केंद्रीय योजनाएं राज्यों के खर्च करने के लचीलापन को प्रभावित करती हैं। केंद्रीय योजनाओं को युक्तिसंगत बनाने का मामला बनता है। संघवाद की भावना में, राज्यों को खर्च करने की अधिक स्वतंत्रता होनी चाहिए। यह देखना दिलचस्प होगा कि सोलहवें वित्त आयोग ने इस मुद्दे को कैसे संबोधित किया है।

वीबी-जी राम जी का अहम पहलू यह है कि वह कृषि क्षेत्र में श्रमिकों की जरूरत पर ध्यान देती है। राज्य बोआई या कटाई के दौरान कुल मिलाकर 60 दिनों तक की अवधि अधिसूचित कर सकते हैं, जब योजना के तहत कार्य स्थगित रहेगा, ताकि कृषि कार्य के लिए उचित मजदूरी पर श्रम उपलब्ध हो सके। इसके अतिरिक्त, नया कानून ग्रामीण रोजगार प्रदान करने और टिकाऊ बुनियादी ढांचा बनाने का लक्ष्य रखता है, जिसमें जल सुरक्षा, मौसम की अतिरंजित घटनाओं को कम करने के लिए कार्य और मुख्य ग्रामीण बुनियादी ढांचे जैसे क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा। यह काम के लिए स्थानीय योजना की परिकल्पना करता है जो राष्ट्रीय स्थानिक प्रणालियों के साथ एकीकृत हो । व्यापक रूप से देखें तो प्रस्तावित कानून में सुधार और विवादास्पद प्रावधान दोनों शामिल हैं। परंतु इसे देश की रोजगार चुनौतियों का हल नहीं माना जाना चाहिए। कोविड महामारी के दौरान मनरेगा काफी मददगार साबित हुई थी। इसके तहत काम की मांग में अब कमी देखने को मिली है जो एक सकारात्मक संकेत है। रोजगार गारंटी योजना का नाम चाहे जो भी हो नीति का ध्यान बेहतर वेतन वाली नौकरियां निर्मित करने पर होना चाहिए ताकि ऐसी योजनाओं पर निर्भरता धीरे-धीरे कम हो सके। यह बात अवश्य बहसतलब है कि क्या गारंटीकृत ग्रामीण रोजगार देने वाले कानून से महात्मा गांधी का नाम हटाना जरूरी था ?